**ओ३म्**

**-काशी शास्त्रार्थ की १४८ वी वर्षगांठ-**

**“मूर्तिपूजा पर ऋषि दयानन्द का अकेले काशी**

**के 40 दिग्गज विद्वानों से सफल शास्त्रार्थ”**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 ऋषि दयानन्द ने अपने जीवन में जो महान् कार्य किए उनमें से एक काशी के दुर्गाकुण्ड स्थित आनन्द बाग में लगभग 50-60 हजार लोगों की उपस्थिति में **‘मूर्तिपूजा वेदसम्मत नहीं है’,** विषय पर उनका शास्त्रार्थ भी था जिसमें स्वामी जी विजयी हुए थे। यह शास्त्रार्थ आज से 148 वर्ष पूर्व 16 नवम्बर, 1869 को हुआ था। इस शास्त्रार्थ में दर्शकों में दो पादरी भी उपस्थित थे। जिले के अंग्रेज कलेक्टर शास्त्रार्थ का आयोजन रविवार को कराने के इच्छुक थे जिससे वह भी इस शास्त्रार्थ में उपस्थित रह सके। उनके आने से पण्डित कानून हाथ में लेकर अव्यवस्था व मनमानी नहीं कर सकते थे, अतः काशी नरेश श्री ईश्वरीप्रसाद नारायण सिंह ने इसे मंगलवार को आयोजित किया था। काशी के सनातनी पौराणिक पण्डितों को यद्यपि इस शास्त्रार्थ में मूर्तिपूजा को वेदसम्मत सिद्ध करना था परन्तु पौराणिकों की वेद में गति न होने और मूर्तिपूजा का वेदों में कहीं विधान न होने के कारण वह शास्त्रार्थ में वेदों व प्रमाणिक ग्रन्थों का कोई प्रमाण नहीं दे सके थे। वह विषय को बदलते हुए विषयान्तर की बातें करते रहे। यह शास्त्रार्थ सायं 4 से 7 बजे तक लगभग 3 घंटे हुआ था। इतिहास में ऐसा उदाहरण नहीं मिलता कि स्वामी दयानन्द ने पूर्व कभी किसी विद्वान ने मूर्तिपूजा के वेद सम्मत न होने पर शंका वा विश्वास किया हो। महाभारत काल के बाद वह पहले व्यक्ति ही थे जिन्होंने मूर्तिपूजा का खण्डन करने के साथ उसे वेद विरुद्ध घोषित किया था। स्वामी शंकराचार्य जी की पुस्तक विवेक चूड़ामणि में भी ईश्वर के सर्वव्यापक व निराकार स्वरूप का वर्णन किया गया है परन्तु उसमें मूर्तिपूजा के वेदसम्मत होने या न होने पर शंका नहीं की गई है और न किसी को शास्त्रार्थ की चुनौती ही दी गई है। ऋषि दयानन्द को परमात्मा से अति उच्च कोटि की परिमार्जित दिव्य बुद्धि व विवेक प्राप्त हुआ था। उन्होंने न केवल मूर्तिपूजा को अवैदिक घोषित कर उसका खण्डन किया अपितु देश की उन्नति में सर्वाधिक बाधक, देश के पराभव, पराधीनता एवं सभी बुराईयों का कारण मूर्तिपूजा को ही माना है। उनके अनुसार ईश्वर पूजा के स्थान पर मूर्तिपूजा ईश्वर प्राप्ति का साधन नहीं है अपितु यह एक ऐसी गहरी खाई है कि जिसमें मूर्तिपूजक गिर कर नष्ट हो जाता है। यह ज्ञातव्य है कि कोई भी कार्य यदि विधि पूर्वक न किया जाये और साधक को इष्ट देव का सच्चा स्वरूप व प्राप्ति की विधि ज्ञात न हो तो वह कभी ईश्वर को प्राप्त नहीं कर सकता। यह आश्चर्य की बात है कि भारत में उपासना के लिए योग और सांख्य दर्शन जैसे ग्रन्थ होते हुए काशी के शीर्ष विद्वान भी मूर्तिपूजा का समर्थन करते थे और स्वयं भी ईश्वर के यथार्थ गुणों के आधार पर यम-नियम का पालन तथा धारणा एव ध्यान न करते हुए पाषाण व धातुओं की बनी हुई मूर्तियों को धूप व नैवेद्य देकर ईश्वर पूजा की इतिश्री समझते थे। यह उनकी घोर अविद्या थी। आज भी हमारे पौराणिक सनातनी भाई मूर्तिपूजा करते हैं। उनके विवेकहीन अनुयायी भी उनका अनुकरण व अनुसरण करते हुए विधिहीन तरीके से पूजा करके ईश्वर के पास जाने के स्थान पर उससे दूर हो जाते हैं जिसकी हानि उन्हें इस जन्म व भावी जन्मों में उठानी पड़ती है। जो भी मनुष्य मूर्तिपूजा करेगा वह भी इससे होने वाली हानियों को उठायेगा। इसका उल्लेख ऋषि दयानन्द अपने प्रमुख ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में मूर्तिपूजा में सोलह प्रकार के दोषों को सप्रमाण व तर्क के साथ किया है।

 मूर्तिपूजा पर स्वामी दयानन्द जी के कुछ विचारों की चर्चा भी कर लेते हैं। उनके अनुसार मूर्तिपूजा का आरम्भ जैन मत से हुआ। सत्यार्थप्रकाश में वह लिखते हैं कि जैनियों ने मूर्तिपूजा अपनी मूर्खता से चलाई। जैनियों की ओर से वह एक कल्पित प्रश्न प्रस्तुत करते हैं कि शान्त ध्यानावस्थित बैठी हुई मूर्ति देख के अपने जीव वा आत्मा का भी शुभ परिणाम वैसा ही होता है। इसका उत्तर देते हुए स्वामी दयानन्द जी कहते हैं कि आत्मा वा जीव चेतन और मूर्ति जड़ गुण वाली है। क्या मूर्ति की पूजा करने से जीवात्मा भी अपने ज्ञान आदि गुणों से क्षीण व शून्य होकर जड़ हो जायेगा? स्वामी जी कहते हैं कि मूर्तिपूजा केवल पाखण्ड मत है तथा मूर्तिपूजा जैनियों ने चलाई है। स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थप्रकाश में चौदह समुल्लास लिखे हैं। बारहवां समुल्लास जैन मत की मान्यताओं की समीक्षा पर लिखा है। उस समुल्लास में भी स्वामीजी ने जैन मत की मूर्तिपूजा विषयक मान्यताओं का सप्रमाण खण्डन किया है।

 मूर्तिपूजा का खण्डन करते हुए स्वामीजी अनेक प्रबल तर्क देते हैं। वह कहते हैं कि जब परमेश्वर निराकार, सर्वव्यापक है तब उस की मूर्ति ही नहीं बन सकती और जो मूर्ति के दर्शनमात्र से परमेश्वर का स्मरण होवे तो परमेश्वर के बनाये पृथिवी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पति आदि अनेक पदार्थ, जिन में ईश्वर ने अद्भूत रचना की है, क्या ऐसी रचनायुक्त पृथिवी, पहाड़ आदि परमेश्वर रचित महामूर्तियां कि जिन पहाड़ आदि से वे मनुष्यकृत मूर्तियां बनती हैं, उन को देख कर परमेश्वर का स्मरण नहीं हो सकता? जो मूर्तिपूजक कहते हैं कि मूर्ति के दखने से परमेश्वर का स्मरण होता है, उनका यह कथन सर्वथा मिथ्या है, इसलिए कि जब वह मूर्ति उनके सामने न होगी तो परमेश्वर के स्मरण न होने से वह मनुष्य एकान्त पाकर चोरी, जारी आदि कुकर्म करने में प्रवृत्त भी हो सकते हैं। वह क्योंकि जानते हैं कि इस समय यहां उन्हें कोई नहीं देखता। इसलिये वह मूर्तिपूजक अनर्थ करे विना नहीं चूकता। इत्यादि। ऐसे अनेक दोष पाषाणादि मूर्तिपूजा करने से सिद्ध होते हैं।

 यह भी बता दें कि काशी शास्त्रार्थ से पूर्व वहां के शीर्ष विद्वान पण्डितों ने अपने शिष्य व विद्वानों को स्वामी दयानन्द जी की विद्या की परीक्षा वा जानकारी लेने के लिए गुप्त रूप से उनके पास भेजा था। यह विद्वान थे रामशास्त्री, दामोदर शास्त्री, बालशास्त्री और पं. राजाराम शास्त्री आदि। यह विद्वान स्वामी जी के पास उनका शास्त्रीय ज्ञान का स्तर जानने के लिए आये थे। काशी के पण्डित अपने पक्ष की निर्बलता को जानते थे। इसलिए वह राजा ईश्वरीप्रसाद नारायण सिंह के कहने पर भी शास्त्रार्थ के लिए उत्साहित नहीं हो रहे थे। इस कारण राजा ने उन्हें प्रत्यक्ष रूप से स्वामी दयानन्द जी से शास्त्रार्थ करने के निर्देश व आज्ञा दी थी। राजा जी ने मूर्तिपूजा से उन्हें प्राप्त होने वाली सुख सुविधाओं व धन वैभव का भी हवाला भी दिया था। यह भी ज्ञातव्य है कि स्वामी जी के वेद प्रचार व मूर्तिपूजा के खण्डन से काशी के लोग बड़ी संख्या में प्रभावित हो रहे थे और मूर्तिपूजा करना छोड़ रहे थे। इसका मनोवैज्ञानिक प्रभाव भी काशी नरेश व पण्डितों पर पड़ रहा था परन्तु मूर्तिपूजा के पक्ष में शास्त्रीय प्रमाण न होने के कारण वह किंकर्तव्यविमूढ़ बने हुए थे। काशी के प्रमुख पण्डित पं. बालशास्त्री आदि ने अपने शिष्यों पं. शालिग्राम शास्त्री, पं. ढुंढिराज शास्त्री धर्माधिकारी, पं. दामोदर शास्त्री तथा पं. रामकृष्ण शास्त्री आदि को स्वामी जी के निकट भेजकर स्वामी जी द्वारा मान्य प्रमाणिक ग्रन्थों की सूची लाने के लिए भेजा था। बाद में काशी नरेश ने अनुरोध किया और पुलिस कोतवाल पं. रघुनाथ प्रसाद ने मध्यस्थता की तो स्वामी जी ने अपने द्वारा मान्य प्रामाणिक ग्रन्थों की सूची स्वहस्ताक्षर सहित उन्हें दे दी। उनके द्वारा उस समय जो 21 शास्त्र प्रमाण कोटि में स्वीकार किये गये वे थे चार वेद संहिताएं, चार उपवेद, वेदों के 6 अंग, 6 उपांग तथा प्रक्षिप्त श्लोकों को छोड़कर मनुस्मृति।

 शास्त्रार्थ के दिन स्वामी दयानन्द जी के एक भक्त पं. बलदेव प्रसाद शुक्ल ने स्वामी जी से कहा कि महाराज, यह काशी नगरी गुणों का घर है। यदि यह शास्त्रार्थ फर्रूखाबाद में होता तो वहां आपके दस बीस भक्त और अनुयायी सामने आते परन्तु यहां काशी में तो आपको शत्रुओं के शिविर में जाकर रण कौशल दिखाना होगा। दृण व अपूर्व ईश्वर विश्वासी स्वामी दयानन्द का पं. बलदेव जी को उत्तर था--बलदेव! डर क्या है? एक ईश्वर है, एक मैं हूं, एक धर्म है, और कौन है? सत्य का सूर्य प्रबल अज्ञान और अविद्या के अंधकार पर अकेला ही विजयी होता है। अपने अटल ईश्वरविश्वास के बल पर ही दयानन्द जी ने जड़ उपासना के प्रतीक दृण दुर्ग काशी को अकेले ही भेदने का निश्चय किया था। शास्त्रार्थ के दिन स्वामी जी ने क्षौर कर्म कराया था, उसके बाद स्नान किया, शरीर पर मृत्तिका धारण की, इसके बाद पद्मासन लगाकर देर तक परमेश्वर का ध्यान किया। इसके बाद उन्होंने भोजन उन्होंने भोजन किया। भोजन के बाद वह शास्त्रार्थ स्थल आनन्दबाग में शास्त्रार्थ आरम्भ होने के समय 4 बजे से पूर्व पहुंच गये थे। यह लेख पर्याप्त विस्तृत हो गया है। हम इस लेख में स्वामी दयानन्द जी के विपक्षी विद्वानों से हुए प्रश्नोत्तर भी देना चाहते थे परन्तु विस्तार भय से नहीं दे पा रहे हैं। इतना ही महत्वपूर्ण है कि काशी के पण्डितों ने वेदों से मूर्तिपूजा का कोई प्रमाण न देकर स्वामी जी विषयान्तर करने का प्रयत्न किया। स्वामी जी के सभी प्रश्नों, धर्म व अधर्म मनु स्मृति के अनुरूप लक्षण वा उत्तर भी वह न बता पाये। शास्त्रार्थ चल ही रहा था कि पं. विशुद्धानन्द शास्त्री जी ने अपनी विजय घोषित कर दी और शास्त्रार्थ स्थल से अपने अनुयायियों की भीड़ के साथ ढोल बाजे बजाते हुए चले गये। पराजय में भी उत्सव मनाना हमारे पौराणिक विद्वानों को आता है। आज काशी शास्त्रार्थ की 148 वीं जयन्ती के उपलक्ष्य में हमने यह विचार प्रस्तुत किये हैं। हम आशा करते हैं पाठक इसे पसन्द करेंगे। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**